उत्कृष्ट वास्तुकला

घनपुर गांव उत्कृष्ट काकतीय वास्तुकला वाले कोटा गुल्लू मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। यहां इन मंदिरों का निर्माण 13 वीं शताब्दी के आरंभ में काकतीय वंश के राजा गणपति देव के शासनकाल में हुआ था। प्रसिद्ध रामप्पा मंदिर से 12 किमी दूरी पर स्थित ये मंदिर चालुक्य और काकतीय शैलियों के मिश्रण हैं। 14 वीं और 16 वीं शताब्दी के बीच मुस्लिम सेनाओं के हमलों तथा 17 वीं शताब्दी में इस इलाके में आए बड़े भूकंप में इन मंदिरों को काफी नुकसान पहुंचा था। यहां जटिल नक्काशीदार लाल बलुआ पत्थर के मंदिर, किलेबंद परिसर और खूबसूरती से डिजाइन किए गए स्तंभों वाले हॉल मध्यकालीन तेलंगाना के आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक-राजनीतिक जीवन की झलक प्रस्तुत करते हैं। इसी कारण यह परिसर इतिहास और वास्तुकला प्रेमियों के साथ आध्यात्मिक यात्रियों के लिए दर्शनीय स्थल है।

काकतीय विरासत की यात्रा वारंगल और कोटा गुल्लू

राजीव सक्सेना
वरिष्ठ पत्रकार, नोएडा

हैदराबाद घूमने के बाद हमारा अगला पड़ाव तेलंगाना राज्य का दूसरा सबसे बड़ा शहर वारंगल था। सड़क मार्ग से लगभग 170 किलोमीटर की दूरी हमने रास्ते में एक जगह रुकते हुए चार घंटे में तय कर ली। वारंगल एक ऐतिहासिक शहर होने के साथ मंदिरों और स्मारकों की भूमि है। इसे किंवदंतियों का शहर भी कहा जाता है। 12वीं से 15वीं शताब्दी के बीच यह काकतीय राजवंश की राजधानी था। वारंगल का गौरवशाली अतीत यहां के स्मारकों में देखा जा सकता है। वारंगल किला, हजार स्तंभों वाला मंदिर, वीरनारायण मंदिर, काकातिया रॉक गार्डन आदि की सैर के बाद हमने घनपुर जाकर कोटा गुल्लू मंदिरों को देखने का निर्णय लिया। यह स्थान वारंगल से करीब 55 किमी दूर स्थित है। स्थानीय भाषा में कोटा गुल्लू का अर्थ 'किले के अंदर मंदिर' बताया गया।

यात्रा का जीवंत केंद्र

मंदिर के लगभग 200 मीटर आगे चबूतरों पर शिलालेख वाले पत्थर और मूर्तियां स्थापित हैं। इनमें भगवान शिव और विष्णु के खड़ी मुद्रा में विभिन्न रूप दर्शाए गए हैं। यहां सबसे खास सभा मंडप के बरामदे हैं। बरामदे के उत्तरी हिस्से में दो मदनिकाएं दिखाई देती हैं। पूर्वी और दक्षिणी बरामदे गज केसरी की कई पौराणिक आकृतियों से सुशोभित हैं, जो हाथी पर सवार आधे मानव-आधे शेर की आकृति हैं और हाथी पर घोड़े के सिर वाले शेर की पीठ है। कोटा गुल्लू वास्तव में स्थापत्य चमत्कार के साथ पूजा और तीर्थयात्रा का जीवंत केंद्र है। आसपास के जिलों से श्रद्धालु नियमित रूप से मंदिरों में प्रार्थना करने और स्थानीय अनुष्ठानों में भाग लेने आते हैं।

60 स्तंभों वाला नाट्य मंडपम

कोटा गुल्लू में 22 मंदिर हैं, जो आकार और डिजाइन में अलग-अलग होने के साथ काकतीय लोगों का अद्भुत वास्तुशिल्प प्रदर्शित करते हैं। मुख्य मंदिर, गणपेश्वरलयम , भगवान शिव को समर्पित है और काफी जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है। इसके गर्भगृह में स्थापित शिवलिंग की पूजा की जाती है। गर्भगृह के सामने 60 स्तंभों वाला नाट्य मंडपम है, जिसमें तीन तरफ से प्रवेश द्वार और एक बरामदा है। गर्भगृह के द्वार के चौखटों पर द्वारपालों और उनके सेवकों की मूर्तियां बनी हुई हैं। मंडपम में दो सिर कटे ऋषियों की मूर्तियां हैं। मंदिर की वास्तुकला में जटिल नक्काशी और टिकाऊ लाल बलुआ पत्थर का इस्तेमाल किया गया है। मुख्य मंदिर के चारों ओर पंक्तियों में व्यवस्थित 19 सहायक मंदिर हैं, साथ ही उत्तर दिशा में एक और शिव मंदिर है। मंडपम के स्तंभ काकतीय वास्तुकला के अनुसार तराशे गए हैं और इनमें छत के बिना बीम लगे हैं। सामने की दीवारों पर देवी-देवताओं, नर्तकियों, संगीतकारों, मदनिकियों, शेरों की सुंदर मूर्तियां बनी हुई हैं।

कहां गए शांत और सुंदर पहाड़

हरीश उप्रेती करन
हल्द्वानी

पहाड़ पहले कितना शांत, सुंदर और आत्मिक सुख देने वाला हुआ करता थे। हर सुबह पक्षियों की चहचहाहट से खुलती थी, ठंडी हवा की सरसराहट से शरीर में नया जीवन भर जाता था और हर दिशा में हरियाली ऐसे लहराती थी मानो कुदरत खुद हमें आशीर्वाद दे रही हो। तब का जीवन कठिन जरूर था, पर उसमें एक मिठास थी, एक अपनापन था और सबसे बड़ी बात, एक सुरक्षित भविष्य का आभास था। बारिश तब भी होती थी। हम उसे सतझड़ कहते थे।

गांव के चारों ओर बहने वाले गधेरे (छोटे बरसाती नाले) गुस्से से सरसराते हुए बहते थे, जैसे कोई नागिन अपनी पूरी ताकत से अपनी राह बना रही हो। दूर तक फैली पहाड़ियों पर पानी ऐसे गिरता था मानो सैकड़ों झरने एक साथ फूट पड़े हों। पानी, हरियाली और प्रकृति की लयबद्ध ध्वनि यही था मेरा पहाड़, लेकिन पर आज अब तो हर दिशा में बस त्रासदी है। अब गधेरे जीवन के संकेत नहीं, बल्कि तबाही की आहट है। पानी अब जीवन नहीं, मृत्यु का संदेश लेकर आता है। अब जब बारिश होती है, तो मन में सुकून नहीं डर पैदा होता है, कहीं भूस्खलन न हो जाए, कहीं किसी का घर जमींदोज न हो जाए। कभी प्रकृति की गोद में लोरी सुनता मेरा पहाड़ आज कराह रहा है। किसकी नजर लग गई मेरे पहाड़ को?

अब समझ आता है, यह प्राकृतिक नहीं, मानवीय त्रासदी है। आज मेरे पहाड़ की रगों में बहते पानी पर खनन माफियाओं की नजर है। जिन खेतों में हम फसलें उगाते थे, उन पर अब भू-माफियाओं की कुदृष्टि है, जो जंगल कभी हमें

जीवन देते थे, उन्हें वन माफिया बेरहमी से काट रहे हैं। यह सब एक संगठित तंत्र के तहत हो रहा है, जिसमें सरकारें भी शामिल हैं। सरकार अब पहाड़ों को बस 'टूरिज्म जोन' मानकर देखती है। मंदिरों की भी पवित्रता अब बाजार में तौल दी गई है, जो स्थान कभी साधना और एकांतवास के प्रतीक थे, आज वहां पर्यटकों की भीड़ है। कैमरे, हंसी-ठिठोली, शोर और प्रदूषण। न देवी-देवताओं को एकांत मिल रहा है, न पहाड़ को चैन। ऐसे में अगर शिवजी अपना तीसरा नेत्र खोलें, तो क्या गलत होगा? हमने पहाड़ की आत्मा को छलनी कर दिया है। खनन के लिए पहाड़ों का सीना चीरा जा रहा है, सड़कों के नाम पर पेड़ों की कतारें साफ की जा रही हैं, बड़े-बड़े होटल और अट्टालिकाएं बन रही हैं, जिनका फायदा केवल बाहरी लोगों को है और जब ये पहाड़ टूटते हैं, जब मलबा गांवों को बहा ले जाता है, तो मारे जाते हैं स्थानीय लोग, जिनका कसूर बस इतना है कि वे यहां रहते हैं। किसी को उनके दर्द की परवाह नहीं है। सरकारी फाइलों में बस आंकड़े दर्ज होते हैं, इतने मरे, इतना नुकसान हुआ, लेकिन उन आंकड़ों के पीछे जो जिंदगियां हैं, जो सपने हैं, उनका क्या? और सबसे दुखद बात यह है कि यह सब जानते हुए भी कोई कुछ नहीं करता। बहती गंगा में सभी हाथ धो रहे हैं। पहाड़ की आत्मा हर रोज मरती जा रही है। अब भी वक्त है, अगर अब भी नहीं चेते, तो वह दिन दूर नहीं, जब पहाड़ हमारे बचपन की स्मृति बनकर रह जाएंगे और आज के बच्चों को हम सिर्फ कहानियों में बताएंगे कि कभी यहां शांति हुआ करती थी, कभी यह धरती स्वर्ग से कम नहीं थी। क्या हम ऐसा पहाड़ अपने आने वाली पीढ़ियों को देना चाहते हैं? सोचना होगा, नहीं तो पहाड़ फिर टूटेगा और अगली बार शायद संभलने का मौका भी न मिले।

पहली जिम्मेदारी का एहसास औपचारिकताओं की चुनौती

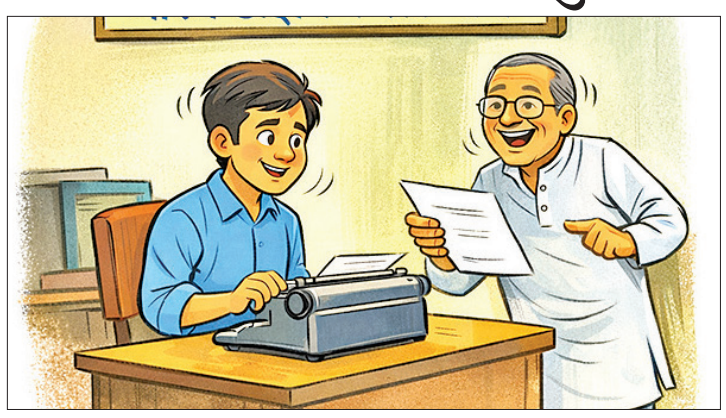

जॉब का पहला दिन

वर्ष 2001 को मैं शिक्षण संस्थान (गौरव टाइपिंग इंस्टिट्यूट), ईदगाह कॉलोनी में अपनी टाइपिंग मशीन पर अभ्यास कर रहा था। तभी लगभग सायं 6:00 बजे शिक्षक/मार्गदर्शक बनारसी तिवारी जी ने खुशखबरी दी कि मेरा चयन समूह 'घ' भर्ती परीक्षा 2001 के अंतर्गत तहसील कानपुर देहात में आशुलिपिक पद पर हो गया है। उन्होंने बताया कि दिनांक 1 दिसंबर को मूसानगर, कानपुर देहात में मुख्यमंत्री की रैली में नियुक्ति-पत्र प्राप्त होगा। यह समाचार सुनकर हम सभी ने एक-दूसरे को मिठाई खिलाकर बधाइयां दीं और रात 9:00 बजे घर लौट आया।

नयन कुमार सोनकर
ओ.एस.डी., जिलाधिकारी
कानपुर नगर

1 दिसंबर की सुबह 6:00 बजे तैयार होकर संस्थान पहुंचा। वहां मेरे साथ उसी संस्थान के अन्य चयनित साथी भी उपस्थित थे। 6:15 बजे सफेद रंग की एम्बेसडर कार आई, जिसमें जिला अधिकारी कार्यालय, कानपुर देहात में कार्यरत वरिष्ठ लिपिक हमें लेने आए। हम कार से ईदगाह कॉलोनी से निकलकर शहर पार करते हुए घाटमपुर तहसील पहुंचे और वहां से सामान्य लिपिक कलेक्टरेट को साथ लेकर मूसानगर के लिए रवाना हुए। रास्ते में उन्होंने हमें आश्वस्त किया कि रैली में उच्च अधिकारी उपस्थित रहेंगे, इसलिए घबराने की आवश्यकता नहीं है, जैसा बताया जाए, वैसा ही करना है।

कुछ समय बाद मुख्यमंत्री रैली में पहुंचे। जनता का अभिनंदन अत्यंत दर्शनीय और उल्लासपूर्ण था। रैली के दौरान ही नियुक्ति-पत्र वितरण आरंभ हुआ। पहले मेरे एक साथी का नाम पुकारा गया, फिर मुझे मंच पर बुलाया गया। जब माननीय मुख्यमंत्री जी ने अपने हाथों से मुझे नियुक्ति-पत्र प्रदान किया, तो वह क्षण मेरे लिए अत्यंत भावुक और अविस्मरणीय था। उन्होंने सभी को बधाई देते हुए परिश्रम और लगन से कार्य करने की सीख दी।

रैली समाप्त होने के बाद हम उसी मार्ग से लौट आए। 2 दिसंबर को रविवार होने के कारण विश्राम किया। अगले दिन ज्वाइनिंग के लिए आवश्यक कागज तैयार कराए। निर्देश मिला कि मुख्य चिकित्साधिकारी कार्यालय से स्वास्थ्य प्रमाण-पत्र बनवाकर, आवश्यक अभिलेखों सहित उप जिलाधिकारी, रसूलाबाद कार्यालय में योगदान प्रस्तुत करना है। एक मोटरसाइकिल सवार की सहायता से मैं सायं 5:40 बजे उप जिलाधिकारी महोदय के आवास पहुंचा और नियुक्ति-पत्र व अभिलेख प्रस्तुत किए। अनुमति मिलने पर जॉइनिंग रिपोर्ट टाइप कराने का निर्देश मिला।

कार्यालय में जॉइनिंग रिपोर्ट टाइप की। समय 6:00 बजे के आसपास हो गया, इसलिए अंतिम बस पकड़ने की सलाह दी गई। मैं रोडवेज बस से कानपुर लौटा। थकान के कारण रास्ते में नींद आ गई और रात 9:30 बजे कानपुर पहुंचकर घर पहुंचा। यह मेरी नौकरी की पहली यात्रा थी बिना किसी परिजन या मित्र के। आज नौकरी करते हुए 24 वर्ष से अधिक समय बीत चुका है, पर वह पहला दिन और उसकी संघर्षपूर्ण यात्रा आज भी स्मृतियों में जीवित है।

मीर तकी मीर : दर्द को शायरी बनाने वाला शायर

मीर तकी मीर सिर्फ गजल के शायर नहीं थे, वे अपने समय की टूटी हुई रूह की आवाज थे। मीर उर्दू गजल को शिखर तक पहुंचाने वाले बड़े कवि थे। उन्हें 'खुदा-ए-सुखन' यानी कि शायरी का खुदा कहा जाता है। उनकी शायरी में दर्द, मोहब्बत, तन्हाई और मानवीय संवेदना गहराई से झलकती हैं। उर्दू ही नहीं फारसी भाषा पर भी उनकी मजबूत पकड़ थी। मीर को उर्दू के उस प्रचलन के लिए याद किया जाता है, जिसमें फारसी और हिन्दुस्तानी के शब्दों का अच्छा मिश्रण और सामंजस्य हो। मीर तकी मीर को उर्दू में शेर कहने का प्रोत्साहन अमरोहा के सैयद सआदत अली ने दिया।

मीर तकी मीर का मूल नाम मोहम्मद तकी था। उनकी प्रमुख कृतियां जिक्र-ए-मीर (आत्मकथा), कुल्लीयते-मीर (उर्दु रचनाओं के छह दीवानों का संग्रह), कुल्लीयते-फारसी (फारसी रचनाओं का संग्रह), फैज-ए-मीर (पांच कहानियों का संग्रह), नुकत-उस-शूरा (फारसी जुबान में लिखी तत्कालीन उर्दु रचनाकारों की जीवनियां) आदि को शामिल किया जाता है। वैसे, वे 'दर्द के शायर' कहलाते हैं। दरअसल, मीर की जिंदगी मुफलिसी (गरीबी), अपनों को खोने के गम और दिल्ली की बर्बादी को देखने में गुजरी। यही वजह है कि उनकी शायरी में 'हूक' और 'टीस' महसूस होती है। उन्होंने खुद एकबार यह कहा था-'मुझको शायर न कहो मीर कि साहब मैंने, कितने गम जमा किए तो दीवान किया।'

सुनील कुमार महला
लेखक

दिल्ली के उजड़ने, परिवार की मौतों, गरीबी और बेघर होने ने उन्हें भीतर से तोड़ दिया था। उनकी शायरी दरअसल आत्मकथा की पंक्तियां हैं। उनकी यह पंक्ति देखिए-'पत्थर की भीत क्या करूं, आंसू जो ढल गए।' नादिर शाह और अहमद शाह अब्दाली के हमलों के बाद दिल्ली उजड़ चुकी

थी। मीर ने दिल्ली छोड़कर लखनऊ जाना, तो स्वीकार किया, लेकिन वे वहां दिल से कभी बस नहीं पाए। मीर की सबसे बड़ी खूबी उनकी भाषा थी। वास्तव में, वे बहुत ही आसान शब्दों में दिल की गहरी बात कह देते थे। इसे तकनीकी भाषा में 'सहल-ए-मुमतना' कहा जाता है-यानी ऐसी चीज, जो देखने में आसान लगे, पर उसे दोबारा लिखना नामुमकिन हो।

शायर मिर्जा गालिब भी उनके कायल थे। सच तो यह है कि गालिब ने मीर को अपना उस्ताद माना। गालिब जैसे आत्मविश्वासी शायर ने कहा-'रेख्ते के तुम ही उस्ताद नहीं हो गालिब,कहते हैं अगले जमाने में कोई मीर भी था।' वास्तव में यह मीर की श्रेष्ठता की सबसे बड़ी गवाही है। मोहब्बत की कैफियत को बयां करते हुए उन्होंने कहा था-'इब्तिदा-ए-इश्क है रोता है क्या, आगे-आगे देखिए होता है क्या।' 'हस्ती अपनी हबाब की सी है, ये नुमाइश सराब की सी है।','नाजुकी उसके लब की क्या कहिए, पंखुड़ी एक गुलाब की सी है।','मीर उन नीम-बाज आंखों में, सारी मस्ती शराब की सी है।' उनकी कुछ अमर पंक्तियों में से एक हैं। आत्मस्वीकृति के बारे में एक बार उन्होंने कहा था -'शायर मुझमें और भी हैं, पर मीर का मुकाबला कौन करे।'

मीर सिर्फ उर्दू गजल के शायर ही नहीं, बल्कि अपने समय के टूटे हुए समाज, उजड़ती दिल्ली और बिखरते इंसान की संवेदनाओं के सच्चे दस्तावेज हैं। उनकी शायरी में बनावटी सौंदर्य नजर नहीं आता है। वास्तव में उनकी शायरी जीवन के गहरे जख्मों से निकली हुई सच्चाई है। अपने जीवन में निजी दुख, मानसिक पीड़ा, गरीबी और उपेक्षा के बावजूद मीर ने उर्दू और फारसी भाषा को आम आदमी के दिल तक पहुंचाया और गजल को आत्मा की आवाज बना दिया। उनका दर्द रचना है। अन्य शायरों की तरह वे कभी शोर नहीं करते, बल्कि रचनाओं में फुसफुसाते हैं और उनकी वही फुसफुसाहट सदियों बाद भी पाठकों के दिल में उतर जाती है। इसलिए मीर को पढ़ना सिर्फ साहित्य का अनुभव नहीं, बल्कि इंसान होने का अनुभव है।